मेरे प्यारे दोस्तो,

अब तुम लोग अपने स्कूली वर्ष की समाप्ति और वार्षिक परीक्षा के इन्तज़ार में होगे। जनवरी-फरवरी के आसपास पढ़ाई का माहौल बढ़ने लगता है। जिन बच्चों ने साल भर पढ़ाई को नज़रअन्दाज़ किया उन्हें अब पाठ्यपुस्तकें याद आने लगती हैं। और रटने-समझने की चीज़ों का पहाड़ कितना ऊँचा है इसका अहसास होने लगता है।

जब मैं मिडिल स्कूल में था तो दो घटनाओं से मेरी पढ़ाई के तरीके में महत्वपूर्ण परिवर्तन आए। पहली घटना यह थी – एक बार महान गायक पंडित नारायण राव व्यास जी एक संगीत गोष्ठी में हिस्सा लेने बनारस आए। व्यास जी पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी के शिष्य एवं उनकी गायकी के जाने-माने कलाकार थे। वे उम्र में मेरे पिताजी से कई साल बड़े थे। बनारस आने पर व्यास जी हमारे घर ठहरा करते थे। उनके चुटकुले, यात्राओं के अनुभव, बड़ों की कहानियाँ मैं और मेरा छोटा भाई अनन्त चाव से सुना करते थे। इसलिए हम दोनों व्यास जी के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। लेकिन इस दफे व्यास जी ने कुछ नया ही सुर छेड़ा। पहले उन्होंने मुझे और अनन्त को बुलाकर एक छोटा-सा लेक्चर दिया। स्वावलम्बन के महत्व पर! हमें अपने काम खुद करने की आदत बनानी चाहिए। जहाँ तक हो सके दूसरों की सहायता टालनी चाहिए।

व्यास जी की इस लेक्चरबाज़ी की वजह यह थी कि वास्तव में हम दोनों काफी परावलम्बी थे। घर में नौकर-चाकर भी थे जो बिस्तर बछाना, नहाने के लिए पानी गरम करना आदि करते थे। इतना ही नहीं पढ़ाई भी हम नियमित रूप से नहीं करते थे। चूँकि कक्षा में हम अव्वल रहा करते थे, इसलिए पिताजी भी पढ़ाई के बारे में हम पर दबाव नहीं डालते थे। व्यास जी ने उन्हें समझाया – इन बच्चों को स्वावलम्बन की दीक्षा दो और इनमें रोज़ चार घण्टे पढ़ाई की आदत डालो।

बस, हम दोनों पर अच्छी खासी नौबत आई। सुबह पाँच बजे उठकर पढ़ाई शुरू करने का आदेश आया और अपने काम खुद करने का फरमान जारी हुआ। हमें लगा कि हमारे प्रिय मेहमान ने हमारे साथ कैसा विश्वासघात किया। सुबह की मीठी नींद छोड़कर कलम-दवात उठाने को जी नहीं करता था। बिस्तर स्वयं उठाने का कष्ट अनावश्यक लगता।

मैं जब परदेस में छात्र था तब मुझे इनकी उपयुक्तता का अहसास हुआ। वहाँ सब काम खुद ही करने होते थे। और अध्यापक ऐसी तेज़ रफ़्तार से पढ़ाते थे कि रोज़ नियमित पढ़ाई के बगैर काम ही नहीं चलता था।

पढ़ाई की दूसरी दीक्षा मिली मोरू मामा से। मोरू मामा एम.एस.सी. गणित के छात्र के रूप में हमारे घर रहते थे। तब मैं आठवीं में था। पिताजी ने हमारे घर की दीवारों पर दो ब्लैक बोर्ड बनवाए थे। उन पर अनन्त और मैं चित्र बनाया करते थे, या नक्शे। कभी-कभी पढ़ाई के लेख भी लिखते थे पर उनका प्रमुख उपयोग मनोरंजन के लिए होता था।

लेकिन एक दिन सबेरे उठकर बोर्ड के पास गया तो उस पर मामाजी ने लिखा था – A Challenge Problem for JVN यानी जयन्त वी नार्लिकर के लिए एक चुनौती। प्रश्न गणित का था। एक कूट प्रश्न, जैसा पाठ्यपुस्तक में नहीं मिलता है। मैंने चुनौती का जवाब तो दिया लेकिन काफी मेहनत के बाद। "अब मैं बीच-बीच में ऐसे प्रश्न लिखकर तुम्हें चुनौती देता रहूँगा" मामा साहब ने ऐलान किया। "अगर प्रश्न सुलझा सके तो तुम्हारी जीत! अगर प्रश्न न सुलझे तो हार मानोगे और मैं सुलझा दूँगा।"

अगले 2-3 वर्षों में मोरू मामा ने चुनौती से भरे प्रश्नों के माध्यम से मुझे गणित के जो दर्शन कराए वे कक्षा में या पाठ्यपुस्तकों में कभी नहीं मिलते। नए अनसुलझे प्रश्न वैज्ञानिकों को उसका हल ढूँढने के लिए प्रेरित करते हैं। आगे चलकर पता चला कि मूलभूत वैज्ञानिक शोधकार्य प्रकृति की चुनौतियों के जवाब होते हैं। ऐसे शोधकार्य के लिए मोरू मामा के प्रश्न मेरे लिए एक अच्छी ट्रेनिंग साबित हुए।

तो मेरे मित्रो, चुनौतियों का जबाव देना सीखो और वह भी अपने बूते पर!

शुभकामनाओं सहित

जयन्त नार्लीकर

जयन्त विष्णु नार्लिकर का जन्म जुलाई 1938 में कोल्हापुर, महाराष्ट्र में हुआ था। खगोलभौतिकी और खगोलशास्त्र में उनके योगदान के लिए उन्हें 1965 में पदमभूषण और 2004 में पदमविभूषण दिया गया। वे लोकप्रिय विज्ञान लेखन में भी गहरी रुचि रखते हैं।